टकराव छोड़ें अमेरिका-चीन

अमेरिका-चीन के बीच जारी कारोबारी जंग समाप्त होने का नाम नहीं ले रही है। 10 मई-2019 को अमेरिका ने 200 बिलियन डॉलर के चीनी उत्पादों पर शुल्क 10 फीसदी से बढ़ाकर 25 फीसदी कर दिया, तो चीन ने अमेरिका से होने वाले 60 अरब डॉलर तक के आयात पर 25 फीसदी टैरिफ बढ़ाया है। दोनों देशों के बीच जारी हितों की लड़ाई दूसरे देशों पर असर डाल रही है।

अमेरिका-चीन के बीच जारी कारोबारी जंग समाप्त होने का नाम नहीं ले रही है। 10 मई-2019 को अमेरिका ने 200 बिलियन डॉलर के चीनी उत्पादों पर शुल्क 10 फीसदी से बढ़ाकर 25 फीसदी कर दिया, तो चीन ने अमेरिका से होने वाले 60 अरब डॉलर तक के आयात पर 25 फीसदी टैरिफ बढ़ाया है। दोनों देशों के बीच जारी हितों की लड़ाई दूसरे देशों पर असर डाल रही है।

अमेरिका-चीन के बीच जारी कारोबारी जंग समाप्त होने का नाम नहीं ले रही है। 10 मई-2019 को अमेरिका ने 200 बिलियन डॉलर के चीनी उत्पादों पर शुल्क 10 फीसदी से बढ़ाकर 25 फीसदी कर दिया है। इसके अलावा अमेरिका ने 300 बिलियन डॉलर के चीनी उत्पादों के आयात पर 25 फीसदी शुल्क आरोपित कर सकता है, जो फिलहाल शुल्क मुक्त हैं। इसके प्रत्युतर में चीन ने उसके उत्पादों पर टैरिफ बढ़ा दिया है। चीन ने अमेरिका से होने वाले 60 अरब डॉलर तक के आयात पर 25 फीसदी टैरिफ बढ़ाया है। इससे पहले अमेरिका ने चीन से आयात होने वाले 200 अरब डॉलर तक के प्रोडक्ट्स पर टैरिफ में इजाफा किया था। मई में चीन और अमेरिका के बीच वॉशिंगटन में हुई बातचीत बिना किसी डील के समाप्त हो गई थी। इसके बाद ट्रंप प्रशासन ने 200 अरब अमेरिकी डॉलर तक के चीनी आयात पर टैरिफ को 10 फीसदी से बढ़ाकर 25 फीसदी कर दिया था। चीन ने अमेरिका के जिन सामानों पर टैरिफ बढ़ाने का फैसला लिया है, उनमें ब्यूटी प्रोडक्ट्स, स्पोर्ट्स इक्विपमेंट्स, म्यूजिकल इंस्ट्रूमेंट्स, वाइन, डायमंड्स, वुड्स, फैब्रिक व खिलौने शामिल हैं।

अमेरिका-चीन के बाद 2018 में 659.84 अरब डॉलर का कारोबार हुआ था। इसमें चीन का निर्यात 539 अरब डॉलर रहा है, जबकि अमेरिका की हिस्सेदारी महज 120 अरब डॉलर की ही रही। अमेरिका अकसर चीन के साथ व्यापारिक असंतुलन की शिकायत करता रहा है और इसमें बैलेंस के लिए ट्रेड डील की मांग की जाती रही है। इस पर कोई राय न बन पाने के चलते ही अमेरिका ने चीन के प्रॉडक्ट्स पर टैरिफ को बढ़ाने का फैसला लिया। सत्ता में आने के बाद से अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप व्यापार मोर्चे पर लगातार आक्रामक रुख अपनाए हुए हैं। डोनाल्ड ट्रंप वर्ष 2017 में अमेरिकी व्यापार नीति कार्यसूची लेकर सामने आये थे, जिसके तहत अमेरिकी संप्रभुता को बढ़ावा देने, अमेरिकी व्यापार कानूनों को लागू करने, वस्तुओं एवं सेवाओं के निर्यात का विस्तार करने, अमेरिकी बौद्धिक संपदा को अक्षुण्ण रखने आदि के लिए प्रयास किया जा रहा है।

अमेरिका के व्यापार घाटे में वर्ष 2018 में वृद्धि हुई है। अमेरिका का आयात निर्यात से अधिक है। हालांकि, मजबूत अर्थव्यवस्था और मजबूत डॉलर आयात का समर्थन करता है। फिर भी, व्यापार घाटे को मुद्दा बनाकर अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप लगातार आक्रामक रुख अपनाए हुए हैं। हालाँकि, वर्ष 2018 में, चीनी युआन में लगभग 5 फीसदी की गिरावट आई थी, जबकि डॉलर इंडेक्स 92.24 से बढ़कर 96.17 हो गया था। इतना ही नहीं, वित्त वर्ष 2019 की पहली तिमाही में पिछले वर्ष की समान अवधि के मुकाबले व्यापार घाटे में 7 बिलियन डॉलर की कमी आई थी। उपभोक्ताओं के इस्तेमाल में आने वाली वस्तुओं का आयात वर्ष 2017 की तुलना में वर्ष 2018 में बढ़ा है। खाद्य एवं पेय पदार्थों के निर्यात में सबसे धीमी वृद्धि देखी गई है। 800 से अधिक अमेरिकी खाद्य व कृषि उत्पादों पर चीन, यूरोपीय संघ, तुर्की, कनाडा और मैक्सिको द्वारा प्रतिशोध के तौर पर शुल्क आरोपित किया गया है। इसकी वजह से कृषि उत्पादों की निर्यात वृद्धि दर धीमी है। 20 फीसदी कृषि आय निर्यात से अर्जित किया जाता है। इसलिए, कारोबारी जंग से अमेरिकी किसानों की आय पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

अमेरिका-चीन द्वारा जारी आधिकारिक व्यापार आंकड़ों के बीच अंतर है। चीनी जनरल एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ कस्टम्स के आंकड़ों से पता चलता है कि अमेरिका में चीनी निर्यात वित्त वर्ष 2018 में 36.1 बिलियन डॉलर था, जो वित्त वर्ष 2019 में घटकर 31.4 बिलियन डॉलर हो गया है। इधर, अमेरिका से चीनी आयात अप्रैल-2018 में 13.9 बिलियन डॉलर था, जो अप्रैल-2019 में घटकर 10.3 बिलियन डॉलर हो गया। आयात की मासिक वृद्धि में निर्यात की तुलना में अधिक गिरावट आई है। इस कारोबारी जंग से चीन पर ज्यादा प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है, क्योंकि अमेरिकी निर्यात का आधार, आयात के आधार से बड़ा है। वैसे, अमेरिका भी इस कारोबारी युद्ध से अप्रभावित नहीं रहेगा। अगर कारोबारी जंग लंबे समय तक चलेगा तो अमेरिकी उत्पादों का निर्यात भी प्रभावित हो सकता है। इस कारोबारी युद्ध से वित्तीय बाजार भी प्रभावित हो सकता है, क्योंकि चीन अमेरिकी ट्रेजरी बाजार में अपनी उपस्थिति को कम कर सकता है। ट्रेजरी और प्रतिभूति उद्योग और वित्तीय बाजार एसोसिएशन के आंकड़ों के अनुसार चीन की ट्रेजरी में 1.13 ट्रिलियन डॉलर की होल्डिंग्स है।

250 बिलियन डॉलर के चीनी उत्पादों पर 25 फीसदी शुल्क आरोपित करके अमेरिका प्रति वर्ष 62.5 बिलियन डॉलर का राजस्व अर्जित कर रहा है, लेकिन यहाँ सवाल उठता है कि क्या यह राशि अमेरिका को हो रहे नुकसान की भरपाई करने के लिए पर्याप्त है, क्योंकि इससे दोनों के राजनीतिक रिश्ते भी कड़वे हो रहे हैं। प्यू रिसर्च सेंटर के एक हालिया सर्वेक्षण में पाया गया है कि अमेरिकी जनता कारोबारी जंग की जगह मुक्त व्यापार समझौतों के प्रति ज्यादा सकारात्मक है। यह भी माना जा रहा है कि अमेरिका-चीन के बीच चल रहे कारोबारी जंग से वैश्विक अर्थव्यवस्था और दूसरे देशों के बाजार प्रभावित हो सकते हैं, क्योंकि इस जंग के सामान्य होने में एकाध साल का समय लग सकता है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) कम होने के कारण भारत अभी तक इस जंग से प्रभावित नहीं हुआ है, लेकिन यह नहीं कह सकते हैं कि आगामी महीनों में हमारा देश इस जंग से प्रभावित नहीं होगा।

भारत दुनिया के तेजी से उभरते बाजारों में से एक है। यह खपत और निवेश के मामले में भी अग्रणी देश है। 15 वर्षों से भारत का वैश्विक अर्थव्यवस्था में उल्लेखनीय योगदान रहा है, लेकिन भारतीय बाजार इस समय कंपनियों की आय वृद्धि दर, स्थानीय स्तर पर नकदी की कमी, वैश्विक कारोबारी मुद्दे और वैश्विक अर्थव्यवस्था की धीमी रफ्तार सहित कई अनिश्चितताओं का सामना कर रहा है। आईएलऐंडएफएस और साख बाजार के संकट से अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। उपभोक्ता उधारी सहित कर्ज आवंटन में खासी कमी आई है। नकदी की हालत भी खराब है। हालांकि,भारत में खपत में तेजी है। ऋण संकट के कारण बस थोड़ा ठहराव आया है, किंतु हालात सुधरते ही खपत में तेजी आयेगी। महंगाई, राजकोषीय घाटा सहित सभी वृहद आंकड़े अच्छी हालत में दिख रहे हैं।

वैश्विक विकास दर के कमजोर होने से कच्चे तेल की कीमतों में बहुत तेजी आने की गुंजाइश नहीं है। भारत में ब्याज दरें अधिक हैं, जिसे समीचीन नहीं कहा जा सकता है। मांग बढ़ाने के लिए हमें ब्याज दरें कम करके वित्तीय प्रणाली में नकदी प्रवाहित करनी होगी। कहा जा सकता है कि भारत में फिलहाल सुस्ती का माहौल बना हुआ है, लेकिन इसे तात्कालिक कहा जा सकता है।

मनीषा पवांर
(स्वतंत्र लेखाकार)

सम्पादकीय

हिंदी : उपेक्षा और विरोध

भाजपा सरकार की दूसरी पारी की शुरुआत में ही नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के कारण विवाद खड़ा हो गया। दरअसल नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मसौदा शुक्रवार 31 मई को केंद्रीय मंत्रिमंडल के सामने पेश किया गया था। इस में हिंदी और अंग्रेजी को एक भारतीय क्षेत्रीय भाषा के साथ-साथ स्थानीय भाषाओं को बढ़ावा देने के लिए अनिवार्य करने की सिफारिश की थी। यह मसौदा मानव संसाधन मंत्रालय की आधिकारिक वेबसाइट पर भी अपलोड किया गया था। लेकिन इसके तुरंत बाद ही देश के विभिन्न क्षेत्रों से हिंदी भाषा की बहस और प्रस्तावित त्रिभाषा सूत्र को लेकर विवाद छिड़ गया। विरोध की सबसे ज्यादा आवाज दक्षिण भारत से उठी। दक्षिण भारतीय राज्यों और अन्य गैर हिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी भाषा को लेकर जारी विवाद के बीच अब सरकार ने ऐलान किया है कि नई शिक्षा नीति में हिंदी भाषा वैकल्पिक तौर पर रखी गई है। यानी हिंदी की अनिवार्यता नहीं रहेगी। सोमवार को जो नया ड्राफ्ट आया है, उसमें फ्लेक्सिबल शब्द का इस्तेमाल किया गया है। अब स्कूली भाषा और मातृ भाषा के अलावा जो तीसरी भाषा का चुनाव होगा, वह छात्र अपनी मर्जी के अनुसार कर पाएंगे। इसमें छात्र अपने स्कूल, शिक्षकों की सहायता ले सकता है, यानी स्कूल की ओर से जिस भाषा में आसानी से मदद की जा सकती है छात्र उसी भाषा पर आगे बढ़ सकता है। गौरतलब है कि नई शिक्षा नीति को इसरो के पूर्व अध्यक्ष के. कस्तूरीरंगन के नेतृत्व में तैयार करवाया है। जिसमें भाषा के सवाल पर एक पुराना विवाद नई शक्ल में सामने आ गया। भारत जैसे बहुभाषी देश में अपनी भाषा से लगाव और अन्य भाषा के प्रति अजनबीपन का भाव, कोई आश्चर्य की बात नहीं है। लेकिन इस लगाव और दुराव पर राजनीति का छौंक जब लगाया जाता है, तो समस्या खड़ी हो जाती है। जब गुलामी का दौर था, तब भी हिंदी को लेकर विवाद खड़े होते थे। सी.राजगोपालाचारी ने जब हिंदी को स्कूलों में अनिवार्य करने का प्रस्ताव दिया था, तो बहुत से तमिल नेता इसके विरोध में खड़े हुए थे। तमिलनाडु के पहले मुख्यमंत्री अन्ना दुरई ने हिंदी विरोध की राजनीति को आगे बढ़ाया। डीएमके की राजनीति हिंदी विरोध से काफी मजबूत हुई। तब करूणानिधि अन्नादुरई के साथ थे। अब करूणानिधि के बेटे और डीएमके प्रमुख स्टालिन ने नई शिक्षा नीति पर कहा है कि तमिलनाडु पर हिंदी थोपने का मतलब है मधुमक्खी के छत्ते पर पत्थर मारना।

इतिहास खुद को दोहराता है, यह बात स्टालिन के इस कथन से एक बार फिर साबित होती है। बहरहाल, विवाद टालने के लिए सरकार ने शिक्षा नीति के मसौदे को तो बदल लिया है, लेकिन भाषायी आग्रह और कटुता का सवाल अब भी वहीं हैं। भाषा समाज को जोड़ने का काम करती है, लेकिन भाषा का राजनीतिकरण समाज को तोड़ने का काम करता है। जिस हिंदी को लेकर अभी बवाल खड़ा हुआ है, उसकी दशा हिंदीपट्टी में ही कैसी है, यह किसी से छिपा नहीं है। बच्चे हिंदी पढ़ना, लिखना नहीं चाहते, और अगर अंग्रेजी में दक्ष हों तो बोलना भी नहीं चाहते।

उनकी परवरिश ही इस तरह हो रही है। समाज में अंग्रेजी बोलने को सभ्य, अभिजात्य और योग्य होने का पैमाना मान लिया गया है और हिंदी बोलने को पिछड़ेपन की निशानी। हिंदीपट्टी के बहुतेरे लोगों का यह भाषायी दुराग्रह केवल हिंदी के प्रति ही नहीं है, बल्कि अन्य भारतीय भाषाओं के लिए भी है। यही वजह है कि त्रिभाषा फार्मूला जिस उद्देश्य के साथ बनाया गया था, वह सफल ही नहीं हुआ।